**Dr. Kumari Priyanka**

**History department**

**H.D Jain college,ara**

**Notes for B.A 2,paper 3**

**Topic:–चोल राजवंश का एक संक्षिप्त परिचय दें।**

चोल वंश सुदूर दक्षिण के प्राचीन राजवंशों में से एक था। संगम-काल में चोलों ने अपनी प्रतिष्ठा को बनाकर रखा था परन्तु बाद के समय में वे शक्तिशाली पल्लवों, चालुक्यों और राष्ट्रकूटों के अधीन सामन्त की भाँति रह गये। 9वीं सदी के मध्य से उनकी शक्ति का पुनरुत्थान हुआ और इस अवसर पर वे सुदूर दक्षिण की एक महान् शक्ति बन गये। 200 वर्ष से भी अधिक समय तक चोलों ने तुंगभद्रा नदी के दक्षिण के सभी भू-प्रदेश और अरब सागर के बहुत से द्वीपों पर अपनी सत्ता को स्थापित रखा तथा शासन और सभ्यता के विकास की दृष्टि से दक्षिण-भारत के इतिहास में महत्वपूर्ण भाग लिया।

**विभिन्न शासक (Various Rulers)**

**विजयालय** (850-871 ई.)- 9वीं सदी में चोल-शक्ति की स्थापना में प्रमुख भाग विजयालय ने लिया। विजयालय पल्लव-शासकों के अधीन एक शक्तिशाली शासक था। उसने पल्लव और पाण्ड्यों से तंजौर को छीन कर उनैयर के स्थान पर तंजौर नगर को अपनी राजधानी बना दिया। इस प्रकार चोलों की प्राथमिक राजधानी 'उरगपुर' से हटकर 'तंजौर' (थंजाबुर अथवा तंजाउर) में स्थापित हो गई। उसने कावेरी की निम्न घाटी और कोलसन घाटी को विजय किया।

**आदित्य प्रथम (**871-907 ई.) विजयालय के पुत्र और उत्तराधिकारी आदित्य ने पल्लव-शासक अपराजित को पाण्ड्यों के विरुद्ध सहायता दी। बाद में 893 ई. के लगभग उसने अपराजित को परास्त करके मार दिया और सम्पूर्ण तोण्डमण्डल पर अपना अधिकार करके चोल वंश के स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की। पल्लवों का बचा हुआ सभी राज्य उसके हाथों में चला गया। उसने पश्चिमी गंगों को भी अपनी अधीनता मानने के लिए बाध्य किया। उसने अपनी राजधानी तंजौर में अनेक शिव-मन्दिरों का निर्माण कराया और उसे सुन्दर बनाया।

**परान्तक प्रथम** (907-953 ई.) परान्तक ने श्रीलंका और पाण्ड्य-शासक राजसिंह को सम्मिलित सेनाओं को परास्त करके राजसिंह के राज्य को अपने राज्य में मिला लिया। उसने बाणों और वैदुम्बों को परास्त किया तथा बल्लाल के युद्धों में राष्ट्रकूट शासक कृष्णा द्वितीय को परास्त करके पैनर नदी के दक्षिण के सम्पूर्ण भू-प्रदेश पर अधिकार कर लिया। परन्तु चोलों की शक्ति के इस तीव्र विकास को राष्ट्रकूट शासक सहन न कर सके और कृष्णा तृतीय ने गंग-शासक के साथ मिलकर चोल राज्य पर आक्रमण किया। 949 ई. में तक्कोलम नामक स्थान पर चोल-सेना की पराजय हुई और चोल-युवराज राजदित्य इस युद्ध में

मारा गया। राष्ट्रकूटों ने तोण्डमण्डल को भी अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। चोलों की यह पराजय इतनी गम्भीर थी कि अगले 32 वर्षों तक चोल-शासक दक्षिण की राजनीति में नगण्य बने रहे।परान्तक प्रथम के पश्चात् सम्भवतया सुन्दर चोल अथवा परान्तक द्वितीय (957-973 ई) ने तोण्डमण्डल को पुनः प्राप्त करने में सफलता पायी।

**राजराज प्रथम महान्** (985-1014 ई.) - उत्तराधिकार में युवराज अरमोलिवर्मन् प्रथम को 985 ई. में अशान्त एवं अव्यवस्थित छोटा-सा कमजोर राज्य प्राप्त हुआ। सिंहासन पर बैठने से पूर्व में ही उसे उत्तर चोल के शासनकाल में ही 'युवराज' के रूप में सैन्य-संचालन तथा शासन कार्य का अनुभव प्राप्त हो चुका था। उसने 'राजराज' की उपाधि धारण की।

राजराज प्रथम अपने जीवन में शैव-धर्मावलम्बी था। उसने 'शिवपाद शेखर' की उपाधि भी धारण की।

चोलों की शक्ति और प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करने का श्रेय राजराज को गया जो चोल वंश का एक महान् शासक हुआ। उसने पश्चिमी गंगों, बेंगी के पूर्वी चालुक्यों, मदुरा के पाण्ड्यों, कलिंग के गंगों और केरल के चेरों को परास्त किया और सम्पूर्ण सुदूर दक्षिण में अपने राज्य का विस्तार किया। उसने एक शक्तिशाली नौ सेना का निर्माण किया और उसकी सहायता से कुर्ग, सम्पूर्ण मलाबार तट और श्रीलंका के कुछ भाग पर अधिकार कर लिया। उसने लकदीव और मालदीव नामक द्वीपों को जीता, पूर्वी द्वीपसमूहों पर आक्रमण किये और श्रीविजय-साम्राज्य के राजा तुंगवर्मन् से मित्रता की। उसने वेंगी में अपने समर्थक विक्रमादित्य को सिंहासन पर बैठाया और उससे अपनी पुत्री का विवाह किया। उसने पश्चिमीचालुक्य-शासक सत्याश्रय के राज्य पर आक्रमण करके उसे लूटा। इस प्रकार, राजराज ने चोलों के एक विशाल साम्राज्य का निर्माण किया और उसकी महानता की नींव डाली।राजराज एक महान् विजेता ही न था अपितु एक योग्य शासन-प्रवन्धक और निर्माता भी था। उसने दक्षिण भारत में सर्वप्रथम एक शक्तिशाली नौ-सेना का निर्माण किया। उसने अपने पुत्र और उत्तराधिकारी राजकुमार को अपने समय में ही शासन में सम्मिलित करने की परम्परा को आरम्भ किया और एक अच्छे स्थानीय स्वशासन की नींव डाली। राजराज शैव- मतावलम्बी था। उसने राजराजेश्वर के शिव मन्दिर का निर्माण कराया जो तमिल-वास्तुकला का एक अद्वितीय नमूना माना गया है। परन्तु वह धार्मिक दृष्टि से सहिष्णु था। उसने बौद्ध मठों एवं विहारों को भी संरक्षण प्रदान किया।

**राजेन्द्र प्रथम (1014-1044 ई.)** राजराज प्रथम ने अपने पुत्र प्रथम को 1012 ई. में युवराज-पद पर आसीन कर उसे भावी सम्राट के रूप में प्रशिक्षित कर दिया था। 1014 ई. में राजेन्द्र प्रथम को चोल राज्य का उत्तराधिकार प्राप्त हुआ। राजेन्द्र ने अपने पिता द्वारा शुरू किये गये कार्य को आगे बढ़ाया और चोलों की शक्ति को उसकी चरम सीमा पर पहुंचा दिया। उसने दक्षिण के पाण्ड्य और चेर राज्यों को जीतकर अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। उसने श्रीलंका को जीतकर अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया यद्यपि 1029 ई. में दक्षिणी श्रीलंका उसके आधिपत्य से मुक्त हो गया। उसने पश्चिमी चालुक्यों के शासक जयसिंह के बेंगी पर अपने प्रभुत्व को स्थापित करने के प्रयत्न को असफल किया और बाद के समय में चालुक्य-शासक सोमेश्वर प्रथम के राज्य पर आक्रमण करके उसे लूटा। उसके समय में तुंगभद्रा

नदी को पश्चिमी चालुक्य-राज्य और चोल-साम्राज्य को विभाजित करने बाली रेखा मान लिया गया। राजेन्द्र ने कलिंग, उड़ीसा और बस्तर के मार्ग से पश्चिमी बंगाल पर आक्रमण किया और शक्तिशाली पाल-शासक महीपाल को परास्त किया। परन्तु उत्तर-भारत पर उसका यह-आक्रमण केवल कीर्ति स्थापित करने हेतु किया गया। उसने उत्तर-भारत के किसी भाग को अपने राज्य में सम्मिलित नहीं किया। उसने मलाया, जावा, सुमात्रा आदि में स्थापित महान् शैलेन्द्र साम्राज्य पर नौ-सेना के द्वारा आक्रमण किया और वहाँ के शासक श्रीविजय ने उसके आधिपत्य को स्वीकार कर लिया। अरब सागर में भी उसने अपनी नौ-सेना की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। इन आक्रमणों का मुख्य उद्देश्य समुद्री व्यापार की रक्षा करना था जिसमें वह सफल हुआ।राजेन्द्र एक महान् विजेता था और वह अरब सागर में नौ सेना की श्रेष्ठता को स्थापित करने वाला पहला भारतीय शासक था। इसके अतिरिक्त यह एक योग्य शासक और महान् निर्माता था । उसने गंगैईकोण्डचोलपुरम् नामक अपनी राजधानी को बसाया,वहाँ अनेक मन्दिर और महल बनवाये तथा चोलगंगम नामक एक झील का निर्माण किया। इस उपलक्ष में उसने 'गंगैकोंड चोल' की उपाधि धारण की।राजेन्द्र चोल ने 1044 ई/तक शासन किया। उसने वीर राजेंद्र परकेशरीवर्मन मुंडिगोंड चोल, पंडित चोल, तथा गंगैकोंडचोल आदि विरुदों को धारण किया। अपने राज्यकाल में ही उसने अपने पुत्र राजाधिराज को युवराज-पद पर अभिषेक कराकर उसे अपना संभाव्य उतराधिकारी घोषित कर दिया।

**राजाधिराज (1044-1052 ई.)-**उसके पुत्र राजाधिराज का अधिकांश समय पाण्ड्य और श्रीलंका के विद्रोहों को दबाने में व्यतीत हुआ। उसने 1052 ई. में चालुक्य-शासक सोमेश्वर को पराजित करने में सफलता पाई। संभवत वह इसी युद्ध में मारा गया।

**राजेन्द्र द्वितीय (1052-1064 ई.) -** राजेन्द्र ने पश्चिमी चालुक्यों और श्रीलंका के राजाओं से युद्ध किये और अपने साम्राज्य की सुरक्षा करने में सफलता पायी।

राजेन्द्र के पश्चात् वीरराजेन्द्र (1064-1070 ई) ने श्रीलंका और शैलेन्द्र-साम्राज्य पर अपने आधिपत्य को सुरक्षित रखा और चालुक्य-शासक सोमेश्वर प्रथम और सोमेश्वर द्वितीय को परास्त करने में सफलता पायी। उसके पश्चात् उसका पुत्र अधिराजेन्द्र (1070 ई) शासक बना परन्तु कुछ विद्रोहियों के द्वारा वह बहुत शीघ्र मारा गया।

**कुलोत्तुंग प्रथम (1070-1120 ई)** अधिराजेन्द्र के पश्चात् चोल वंश की मध्य शाखा समाप्त हो गयी और उसके पश्चात् उसका बहनोई कुलोतुंग प्रथम शासक बना। कुलोत्तुंग ने पाण्ड्य और केरल के शासकों को परास्त किया, अपनी पुत्री का विवाह श्रीलंका के एक राजकुमार से किया, कन्नौज, काम्बोज, चीन और ब्रह्मा से अपने कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित किये और अपने राज्य को समृद्धशाली बनाया।कुलोतुंग प्रथम के उत्तराधिकारियों (विक्रम चोल, कुलोतुंग द्वितीय, राजराज द्वितीय, राजाधिराज द्वितीय, कुलोतुंग तृतीय, राजराज तृतीय और राजेन्द्र तृतीय) ने एक सदी (1120-1279 ई) से भी अधिक समय तक शासन किया परन्तु उनके समय में चोलों की शक्ति निरन्तर दुर्बल होती गयी। पाण्ड्य, होयसल, काकतिया और पूर्वी गंग-वंश के शासक उनकी सीमाओं को छोटा करते चले गये।

**राजेन्द्र तृतीय (1246-1279 ई.)** राजराज तृतीय के बाद 1246 ई. में राजेन्द्र तृतीय चोल राजसिंहासन पर बैठा। युवराज काल में सम्भवतः उसने पाण्ड्य राज्य को जीत लिया तथा होयसल एवं काकातीय राज्यों को पराजित करके अपने साम्राज्य में कुछ समय के लिए सम्मिलित कर लिया था। 1250 ई. में काकातीय शासक गणपति ने आक्रमण कर काँची पर अधिकार कर लिया। सुंदरपांड्य ने भी होयसल नरेश की सहायता पाकर चोल राज्य पर आक्रमण किया था। फलतः विवश होकर उसने पांड्यों की अधीनता स्वीकार कर ली। लगभग 1279 ई. तक वह पांडयों के अधीन सामन्त शासक के रूप में बना रहा। फलतः चोल शासित प्रदेश पर शक्तिशाली पांड्य राज्य की प्रभुता स्थापित हो गयी।